सरिता अब सीख रही है

जय शेखर

मैं, जनपद बलरामपुर, उत्तर प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्र के विद्यालय में अध्यापन कर रहा हूँ। मेरी रुचि लाइब्रेरी और इससे जुड़ी शैक्षिक गतिविधियों में अधिक रही है। स्कूल लाइब्रेरी को हमेशा सक्रिय और जीवन्त बनाने के प्रयास किए हैं। संवाद के ज़रिए, मैं बच्चों को स्वतंत्र और मौलिक लेखन के लिए प्रोत्साहित करता रहता हूँ जिससे हमने बच्चों के लेखन से ओतप्रोत ढेर सारी दीवार पत्रिकाएँ बनाई हैं। बच्चों की लिखी कहानियाँ, *प्लूटो, चकमक* और *साइकिल* जैसी बाल पत्रिकाओं में भी प्रकाशित हुई हैं।

इसी बीच, मुझे एहसास हुआ कि छोटे बच्चों के लिए कविताएँ बेहद ज़रूरी हैं। मैंने धीरे-धीरे कक्षा में बहुत-से गीत और कविताएँ सिखाईं। इनमें केरल के केले, जुगनू भाई, टेसू राजा बीच बाज़ार, टके थे 10, नाव चली, हल्लम हल्लम, रेल चली छुक छुक, आदि प्रमुख थीं। कक्षा को बच्चों की रचनाओं से प्रिंट समृद्ध और भाषा समृद्ध बनाते हुए कविता-कहानियों के बहुत-से पोस्टर तैयार किए, और उन्हें बच्चों की पहुँच के अनुरूप दीवार पर लगा दिया। इस पठन सामग्री से जुड़ी गतिविधियों से बच्चों को पढ़ना सीखने में काफ़ी मदद मिली।

मैंने बच्चों को सुनाई कहानियों पर रोल प्ले शुरू किए। प्रभात की कहानी *अच्छा मौसी अलविदा* में तीन पात्र थे– चिड़िया, बिल्ली और भैंस। कहानी के मज़ेदार रीड अलाउड के बाद, उसी अन्दाज़ में बच्चों ने अपनी भाषा में संवाद बोलकर पूरी कहानी को प्रस्तुत किया। सरिता ने भी अपना रोल पूरे हाव-भाव से निभाया। एक दिन श्वेता नांबियार की कहानी 'पहली बार' सुनाई। इसमें शिक्षक का रोल महत्त्वपूर्ण था, और बोले जाने वाले संवाद बहुत लम्बे थे। सरिता ने यह चुनौती स्वीकार की। थोड़ी-सी मदद से उसने बेहतर तरीक़े से अपना रोल निभाया।

सरिता को गाँव के बहुत-से खेल आते थे। यह खेल कक्षा के बाक़ी बच्चों के लिए नए व रोचक थे। मैं भी इन खेलों में शामिल होता। सरिता ही नियम बताती और सबको साथ में खेलने के लिए जोड़े रखती थी। इसी तरह, कहानी पर चित्र बनाने की गतिविधि होती थी। सभी बच्चे कोशिश करते, पर सरिता उसे बहुत लगन से करती।

बच्चों ने पेड़ों से गिरने वाली पत्तियों को एकत्र किया। उनके आकार और रंगों में विविधता थी। बच्चों ने भूरी पीली, हरी और लाल पत्तियों के संयोजन से गोल, चौकोर, तिकोने आकार में सुन्दर संयोजन बनाए। इनमें उन्हें अपनी रचनाशीलता को प्रस्तुत करने के मौक़े मिले।

लाइब्रेरी की किताबों व भाषा समृद्ध कक्षा में इन सारे प्रयासों का प्रभाव यह हुआ कि सरिता, जो सहमी, संकोची और बात-बात पर झगड़ने वाली लड़की थी, अब कक्षा की लीडर है।

एक दिन मध्याह्न भोजन के दौरान सरिता ने टिफ़िन में दोबारा भोजन लिया, और चुपके से अपने बैग में रख लिया। मुझे काफ़ी आश्चर्य हुआ। सोचा, कहीं ऐसा तो नहीं इसकी चाची इसे भरपेट भोजन नहीं देती हो, और यह रोज़ भूखी रहती हो।

फिर मैं पुस्तकालय से प्रभात की किताब *कैसा कैसा खाना* ढूँढ़कर लाया। इंटरवल के बाद इस कहानी का रीड अलाउड किया। मैं किताब को पढ़ते हुए, चित्र दिखाकर बच्चों से खाने के बारे में बातें कर रहा था। तभी सरिता ने बताया कि उसने आज टिफ़िन में खाना रख लिया है। सरिता ने बताया कि आज उसके चाची-चाचा गाँव गए हैं और उसे भी ले जाने की ज़िद कर रहे थे, पर उसने यह कहकर गाँव जाने से मना कर दिया कि उसकी पढ़ाई छूट जाएगी। उसने आँखों में आँसू भरकर बताया कि वह विद्यालय छोड़कर माता-पिता के पास गाँव नहीं जाना चाहती।

जय शेखर, अध्यापक, कम्पोजिट विद्यालय धुसाह, बलरामपुर, उत्तर प्रदेश में अध्यापक हैं।

वंचित समुदाय के बच्चों का विद्यालय से जुड़ना

मीनाक्षी गौड़

कोविड काल के बाद सरकारी स्कूलों में नामांकन घटने लगा था। हमारे स्कूल में भी नामांकन की समस्या होने लगी थी। मैंने स्कूल के चारों तरफ़ नज़रें घुमाईं ताकि उन बच्चों को ढूँढ़ सकूँ जो स्कूल से नहीं जुड़ पाए हैं।

स्कूल से 1 किलोमीटर दूर कुछ कालबेलिया परिवार झुग्गी-झोपड़ी बनाकर रह रहे थे। उनके बच्चे स्कूल नहीं आते थे। सारा दिन कचरा बीनना, इधर-उधर घूमना और पतंग उड़ाने में वह व्यस्त रहते थे। मैं उनके पास पहुँची, और परिवार वालों को कई प्रकार से समझाया-बुझाया कि वह अपने बच्चों को स्कूल भेजें। स्कूल जाने लायक़ बच्चों का दाख़िला भी विद्यालय में किया। दाख़िले के लिए ज़रूरी दस्तावेज़, आधार कार्ड, आदि बनवाने में उनकी मदद की। हालाँकि बच्चे विद्यालय से जुड़ गए थे, लेकिन उनका मन अभी विद्यालय से नहीं लगा था। वह एक दिन आते और फिर हफ़्ते भर ग़ायब रहते। हमेशा सोचती, सम्भव है हमारे प्रयासों से एक दिन सभी बच्चे नियमित रूप से स्कूल आएँ। जब मैं उनको स्कूल के लिए लेने जाती, उनके परिवारजन मुझसे दुर्व्यवहार करते, और कभी-कभी गालियाँ भी मिलतीं। उनको लगता था कि मैं उनके काम में हाथ बँटाने वालों की संख्या कम कर रही हूँ। मैं समझाती कि पढ़ने-लिखने के बाद वह अच्छे आदमी, अच्छे नागरिक बनेंगे, और अच्छी नौकरी कर सकेंगे। पढ़-लिखकर वह अपना और पूरे परिवार का बेहतर तरीक़े से ध्यान रख सकते हैं। इसीलिए तो सरकार और बहुत सारे लोग भी सबको शिक्षित करने में लगे हैं। अच्छा होगा, आप अपने बच्चों को स्कूल भेजें।

समुदाय के पुरुषों में पढ़ने-लिखने को लेकर कोई सजगता नहीं थी। मैं गालियों से क्षुब्ध होने की बजाय सोचती, "गालियों से मेरा क्या बिगड़ जाएगा! यदि दो-चार बच्चे भी शिक्षा से जुड़ते हैं, यह गालियाँ उसके एवज में बहुत कम हैं।" बच्चों को विद्यालय से मिलने वाली सुविधाएँ दी जातीं, हम लोग उनकी हर सम्भव सहायता करते। बच्चों का स्कूल आना माताओं को पसन्द था, लेकिन पिता नहीं चाहते थे कि वह स्कूल जाएँ। वह सोचते थे, पढ़-लिखकर करेंगे क्या! माताएँ भी मज़दूरी करने जाती थीं, इसलिए वह बच्चों को समय पर स्कूल नहीं भेज पाती थीं। बच्चों की अनियमितता से, मैं और मेरे शिक्षक साथी काफ़ी चिन्तित होते। हमने बारी-बारी से उनके घर जाना सुनिश्चित किया और उन्हें स्कूल लाने के काफ़ी प्रयत्न किए, लेकिन प्रयास नाकाफ़ी रहे।

बच्चों की अनियमितता के विषय में मैंने दस्तक समूह में चर्चा की। समूह में मुझे सार्थक सुझाव मिले। बताती चलूँ कि दस्तक समूह हम शिक्षक साथियों का एक ऑनलाइन समूह है जिसमें हम रोज़ शिक्षा, साहित्य और समकालीन विचारों से जुड़ी ज्ञानवर्धक सामग्री पढ़ते हैं। दस्तक समूह ने सुझाया कि जितने बच्चे स्कूल आ रहे हैं उनके साथ बेहतर शिक्षण कार्य करें, उन्हें स्नेह दें, और लगातार समुदाय के सम्पर्क में रहें। बच्चों के माता-पिता को समय-समय पर विद्यालय आमंत्रित करें ताकि वह विद्यालय और अपने बच्चे को कुछ बेहतर करते हुए देख सकें। हमने बिल्कुल वैसा ही किया।

समूह के सुझाव पर, विद्यालय को पर्यावरण मित्र कैम्पस के रूप में विकसित किया गया। कक्षा की दीवारों को 'प्रिंट रिच' बनाने की कोशिश की गई। मेरी बेटी ने भी इसमें काफ़ी मदद की। दीवारों पर पशु-पक्षियों व वन्य-जीवों के चित्र बनाए। कविता, चित्र और चित्र कहानियों के पोस्टर बनाकर लगाए। बाल साहित्य के इस्तेमाल से बच्चों की स्कूल में दिलचस्पी जाग रही थी।

लेकिन सार्थक परिणाम तब मिले जब हमने 10 साल की एक लड़की निर्मला को विद्यालय से जोड़ा। वह घर पर ही रहती थी, और दो महीने स्कूल नहीं आई। इसका कारण जाना, तब समझ आया कि वह दो छोटे भाइयों की देखरेख के लिए घर पर रहती है। निर्मला के मन में यह बात बैठा दी गई थी कि पढ़ना-लिखना उन लोगों का काम नहीं है। यह बात उसके दिमाग़ से निकालने में काफ़ी मेहनत करनी पड़ी। हम उसके घर वालों से लगातार बातचीत करते रहे, उन्हें प्रेरित करते रहे, पढ़ने के फ़ायदे बताए, तब कहीं जाकर निर्मला का स्कूल आना सम्भव हुआ। कुछ दिनों बाद मैंने निर्मला से कहा, "तुम अपने छोटे भाइयों को भी विद्यालय लेकर आया करो।" वह दोनों छोटे भाइयों, और साथ ही बस्ती के कुछ दूसरे बच्चों को भी विद्यालय लाने लगी। अब पढ़ाई के प्रति उसकी लगन देखकर सुखद एहसास हुआ कि हम कुछ तो सार्थक कर रहे हैं। वह ख़ुद भी सीख रही है और दूसरे बच्चों को भी प्रेरित कर रही है। गणित के व्यावहारिक सवालों को भी जल्दी से हल कर पाती है क्योंकि बाज़ार से सामान लाने का काम वह ख़ुद ही करती है। अँग्रेज़ी पढ़ने में भी उसकी रुचि है। अब वह अपनी पढ़ाई को तो गम्भीरता से लेती ही है, साथ के दूसरे बच्चों की पढ़ाई को भी अपनी ज़िम्मेदारी मानती है।

जहाँ बच्चे पहले मैले-कुचैले कपड़ों में ही स्कूल आते थे, अब कुछ साफ़-सुथरे होकर आने लगे हैं। नहाने-धोने से उनके त्वचा सम्बन्धी रोग कम हुए हैं। उनकी अपने शरीर के स्वास्थ्य व स्वच्छता के प्रति जागरूकता बढ़ी है। इनमें ज़्यादातर बच्चे तम्बाकू या गुटखे का सेवन करते थे। इस पर लगातार बातचीत कर उन्हें ख़ूब समझाइश दी गई। तरह-तरह के चित्र दिखाकर इसके दुष्प्रभावों और फैलने

वाले असाध्य रोगों के बारे में बताया। जगह-जगह फेंके गए प्लास्टिक के पाउच की गन्दगी और उनके पर्यावरण पर पड़ने वाले दुष्प्रभावों से अवगत कराया। इससे बात कुछ बनती हुई लगी। अब दुष्प्रभाव से अवगत होकर बच्चे इन व्यसनों से दूरी बनाने लगे हैं। हालाँकि यह सुखद परिणाम अभी भी अपर्याप्त हैं, लेकिन असफलता से कुछ अधिक तो निश्चित हैं। शिक्षकों व समूह के साथियों के समर्थन से सफलता मिलने की उम्मीद बनी हुई है।

मीनाक्षी गौड़, राजकीय प्राथमिक विद्यालय, आडवाणी की ढाणी, सांगानेर ग्रामीण, जयपुर, राजस्थान

प्रोत्साहन से बच्चों में बढ़ता है ख़ुद पर भरोसा

नंदिनी कुमारी

मैं सरकारी विद्यालय में शिक्षिका हूँ। दस वर्षों के अनुभव में मैंने जितना बच्चों को सिखाया है, उससे कुछ अधिक ही उनसे सीखा है। आमतौर पर देखा गया है कि हमारे सरकारी विद्यालय में आने वाले ज़्यादातर बच्चे पहली पीढ़ी के शिक्षार्थी होते हैं। इनमें अधिकांश आर्थिक व शैक्षिक दृष्टि से कमज़ोर पृष्ठभूमि के होते हैं। ऐसे में, सभी बच्चों को एकरूपता से पढ़ाना मुश्किल होता है। किसी को किताब पढ़ना नहीं आता, वहीं किसी को लिखना नहीं आता, और किसी को बोलने में ही झिझक होती है। कुछ प्रतिभा के लिहाज़ से काफ़ी सम्पन्न होते हैं, लेकिन परिस्थितियों के चलते व सही दिशा के अभाव में भटक-से जाते हैं। हर किसी में अपनी अलग-अलग ख़ूबियाँ होती हैं, अलग-अलग कौशल होते हैं। कोई गाने में, तो कोई कुछ बनाने में, वहीं कोई किसी खेल में क़ाबिलियत रखता है।

मैंने अपनी एक विद्यार्थी की ऐसी ही ख़ूबियों को अपने तरीक़े से सिर्फ़ तराशने की कोशिश की, और हासिल यह कि कला के क्षेत्र में उसे एक पहचान भी मिली। अभी दो सत्र पहले की बात है। आठवीं कक्षा में एक विद्यार्थी थी, सुगंधा। उसकी बहन भी साथ ही पढ़ती थी। उसका नाम सुनंदा था। पढ़ने में दोनों ठीक थीं। सुगंधा बहुत अच्छा गाती थी। उसकी आवाज़ बहुत मधुर थी, लेकिन उसमें झिझक काफ़ी ज़्यादा थी। झिझक, एक तो ग्रामीण परिवेश के चलते थी जहाँ नृत्य, गायन, वादन जैसी चीज़ों को बहुत अच्छा नहीं माना जाता और दूसरे, जब अच्छा नहीं माना जाता तो इन कलाओं के लिए कोई सार्थक मंच अथवा प्रस्तुति या प्रदर्शन के लिए अवसर नहीं मिल पाते। ऐसे में, सुगंधा को उसकी इस प्रतिभा को निखारने के लिए राज़ी करना एक टेढ़ी खीर थी। पहली बाधा उसका संकोची और अत्यधिक शर्मीला स्वभाव, और फिर यहाँ की सामाजिक परिस्थितियाँ जिनमें बालिकाओं का नृत्य, गायन, वादन, यहाँ तक कि खेलों में भी भाग लेना कमोबेश शर्म का विषय माना जाता है। इसे जेंडर को लेकर दुराग्रही समाज कह सकते हैं। इन परिस्थितियों के बीच मुझे सुगंधा के साथ काम करना था। पर कैसे? यह एक समस्या थी। उसके घर जाकर उसके माता-पिता से बात की। शुरू में वह भी झिझक रहे थे कि गाँव-जवार में सब लोग क्या कहेंगे कि फलाँ की बेटी मंचों से गाती है! फिर मैंने उनको कुछ महिला गायकों का उदाहरण दिया। चूँकि हमारा क्षेत्र भोजपुरी भाषा-भाषी है, इसलिए मैंने शारदा सिन्हाजी के बारे में बताया कि वह प्रोफ़ेसर भी थीं और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की गायिका भी। एक और उदाहरण मालिनी अवस्थी का दिया जो लोक गायन में देश की लब्धप्रतिष्ठित गायिका हैं। ख़ैर, दो-चार मुलाक़ातों की जद्दोजहद व समझाइश के बाद मैंने उन्हें राज़ी किया। उन्होंने मेरी बातों पर भरोसा किया, और इसमें मेरे शिक्षक होने की भी बड़ी भूमिका थी। उनका मानना था कि शिक्षक हैं तो उनकी बेटी के लिए सही ही सोच रही होंगी।

फिर सुगंधा। पहले उसकी झिझक दूर करना ज़रूरी था। मैंने ख़ुद उसके साथ कुछ-कुछ गाना शुरू किया, अकेले में। फिर धीरे-धीरे उसे साथ लेकर कक्षा में बच्चों के साथ गाने लगी। बाक़ी बच्चों को भी प्रोत्साहित करती, गीत, कविता वग़ैरह गाने को। जब भी मौक़ा मिलता, उससे कुछ-न-कुछ गाने को कहती। वह शर्म और झिझक के चलते कक्षा में खड़े होकर गा नहीं पाती थी। उसके पैर काँपते थे, अकसर पसीने से भीग जाती। उसके साथ लम्बे समय तक काम करना पड़ा। फिर उसको बैठे-बैठे ही गाने को कहा। मुश्किल से दो-चार पंक्तियाँ गा पाती थी। फिर चुप। कक्षा में कुछ गीत, कविताएँ उससे गवाती। बाक़ी बच्चे भी गाते। फिर विद्यालय में होने वाले कार्यक्रमों, 15 अगस्त, 26 जनवरी और अन्य आयोजन जिनमें सांस्कृतिक गतिविधियाँ हो रही हों, में उसे भाग लेने को प्रोत्साहित करती। उसके साथ मिलकर तैयारी करती। मैं भी सराहती और साथी शिक्षक भी, क्योंकि उसकी प्रतिभा थी ही सराहे जाने योग्य। साथी शिक्षक समुदाय का यह सहयोग महत्त्वपूर्ण था कि उन्होंने विद्यालय में एक सांस्कृतिक माहौल बनाने में बड़ी भूमिका निभाई। जब भी अवसर मिलता वह सुगंधा को ही नहीं, अपितु साहित्य, संगीत या खेल के क्षेत्र में दूसरे बच्चों को भी मौक़े देते और उन्हें सराहते।

ख़ैर, एक-दो बार तो ऐसा हुआ कि हमने किसी दिन सुगंधा का कार्यक्रम रखा तो डर और झिझक के चलते वह विद्यालय ही नहीं आई। लेकिन मैं प्रयास करती रही, और कुछ समय बीतने पर उसने स्टेज फ़ेस करना सीख लिया। फिर एक दिन कुछ मीडियाकर्मी स्कूल में आए। उन्होंने सुगंधा को मेरी फ़ेसबुक प्रोफ़ाइल पर गाते हुए सुना था। उन्होंने एक अच्छी-सी स्टोरी बनाकर प्रकाशित की।

बाद में, सुगंधा को ज़िला मुख्यालय में स्टेज शो का मौक़ा मिला। अब उसका अपना एक एल्बम भी जारी हो आया है, और अभी उसके सामने सपनों का आसमान है जिसमें वह अपनी उड़ान तय कर सकती है।

यहाँ से उसे जो आत्मविश्वास मिला, उससे वह पढ़ने में भी और बेहतर करने लगी। कुछ बच्चे मोटिवेशन के बिना पिछड़े हुए रहते हैं। वह प्रोत्साहन से सीख सकते हैं, और अपनी पसन्द के क्षेत्र में अच्छा कर सकते हैं। बस ज़रूरत है उनके साथ धैर्य बनाकर जुटे रहने की।

सुगंधा की सफलताओं ने विद्यालय को प्रसिद्धि दी और गरिमा भी। विद्यालय में जो सांस्कृतिक-साहित्यिक माहौल था, वह और बेहतर हुआ। इस तरह की गतिविधियों को गम्भीरता से लिया जाने लगा। इसके बाद, बहुत-से बच्चों को घर से भी प्रोत्साहन मिला। विद्यालय की सांस्कृतिक गतिविधियों के प्रति अभिभावकों का भी सकारात्मक रुझान बनने लगा। इन्हें पढ़ने-लिखने की संस्कृति में शामिल गतिविधि की तरह देखा जाने लगा।

नंदिनी कुमारी, राजकीय माध्यमिक विद्यालय, भेड़िया सुअरा, विकासखण्ड देहरी, रोहतास, बिहार

बच्चों ने अँग्रेज़ी में बनाईं ख़ुद की कविताएँ

उपमा रानी

एक दिन जब मैं दूसरी कक्षा की एनसीईआरटी की नई अँग्रेज़ी पुस्तक *Mridang* के पन्ने पलट रही थी तब मैं उसके चमकीले रंगों की ओर आकर्षित हुई। मैं पहली बार इस पुस्तक से पढ़ा रही थी, और जब मैंने इसके पन्नों पर सरसरी नज़र डाली तो मुझे एक कविता मिली जिसका शीर्षक था– 'Everybody stop, everybody stand'। कविता पढ़ने के बाद, मन में एक विचार आया कि मैं इसके साथ कुछ नया और रचनात्मक कर सकती हूँ। इस शीर्षक ने मुझे यह सोचने के लिए प्रोत्साहित किया कि शिक्षक अकसर कक्षा में "सभी खड़े हो जाएँ" या "सभी बैठ जाएँ" जैसे निर्देश देते हैं, इसलिए मैंने सोचा कि हम इन परिचित आदेशों का उपयोग एक नई कविता लिखने की एक प्रेरणा के रूप में कर सकते हैं।

मैंने अपने पाँचवीं कक्षा के विद्यार्थियों के साथ इस गतिविधि को करने का फ़ैसला किया। एक दिन मैंने कक्षा में बच्चों से कहा कि हम एक साथ एक कविता लिखेंगे। यह सुनते ही विद्यार्थियों को लगा कि उन्हें अपनी पाठ्यपुस्तक से किसी कविता की नक़ल करनी है। लेकिन जब मैंने उन्हें बताया कि वे अँग्रेज़ी में अपनी ख़ुद की कविताएँ लिखेंगे, उनके चेहरे पर अनिश्चितता के भाव दिखाई दिए। मैंने उन्हें आश्वस्त किया कि यह गतिविधि मज़ेदार होगी, और उन्हें कोशिश करने के लिए प्रोत्साहित किया। शुरुआत में, मैंने गतिविधि की मॉडलिंग की। मैंने ब्लैकबोर्ड पर एक छोटी कविता लिखी और उसे दो-तीन बार ज़ोर से पढ़ा :

Everybody stop

Everybody stand

Everybody sit

And raise your hand

विद्यार्थियों ने मेरे साथ इसका अनुसरण किया। मैंने उन्हें समझाया कि हम शुरुआत में कविता में आए क्रिया शब्दों (verbs) को बदलेंगे, और तीन सरल नियम साझा किए :

1. वह केवल तीन क्रिया शब्दों का उपयोग कर सकते हैं।

2. क्रिया शब्द एक दूसरे से सम्बन्धित होने चाहिए।

3. तीसरी पंक्ति में उन्हें क्रिया शब्दों से सम्बन्धित एक प्रश्न पूछना था। उदाहरण के लिए, यदि शब्द 'खाओ, पियो, खेलो' हों, तो प्रश्न हो सकता है : तुम क्यों खाते-पीते हो?

4. चौथी पंक्ति में प्रश्न का उत्तर देना होगा : स्वस्थ रहने के लिए।

विद्यार्थियों ने 'Drink', 'Jump' और 'Hop' जैसे अलग-अलग क्रिया शब्दों पर विचार करना शुरू कर दिया। मैंने कक्षा में चक्कर काटते हुए उनके काम को देखा, और सुनिश्चित किया कि वह नियमों का पालन करें। कुछ लड़कियों को अँग्रेज़ी क्रिया शब्दों के बारे में

सोचने में परेशानी हुई, लेकिन वह हिन्दी में अधिक सहज थीं और उन्हें चित्र बनाने में मज़ा आया। मैंने उनसे पूछा, "आप चित्र क्यों बनाती हैं, और इनमें रंग क्यों भरती हैं?" उन्होंने जवाब दिया, "क्योंकि हमें यह अच्छा लगता है!" मैंने सुझाव दिया कि वह 'ओह वाटर फ़न' कविता का उदाहरण देते हुए इसे अपनी कविता में शामिल कर सकती हैं।

एक विद्यार्थी ने 'Hop', 'Jump' और 'Go' लिखा, और मैंने उससे 'Go' का तुकान्त शब्द खोजने को कहा। उसने कहा, "Bow, Bow", और मैंने उसका जवाब स्वीकार कर लिया क्योंकि मुझे लगा कि विद्यार्थियों के लिए सही होने की अपेक्षा प्रयास करना, खोज करना और रचनात्मक होना ज़्यादा महत्त्वपूर्ण है। सभी विद्यार्थियों को गतिविधि का आनन्द लेते हुए देखना एक सुखद अनुभव था।

एक शिक्षक के रूप में मेरी भूमिका यह थी कि मैं उन्हें मार्गदर्शन और उनकी रचनात्मकता का पता लगाने के अवसर दूँ। मैंने सुनिश्चित किया कि उन्हें बहुत ज़्यादा न सुधारूँ, क्योंकि मैं न तो उन्हें हतोत्साहित करना चाहती थी न ही यह चाहती थी कि वह हार मान लें। समय के साथ हमने छोटी कविताओं का एक अद्‌भुत संग्रह तैयार कर लिया। अन्त में, मैंने प्रत्येक विद्यार्थी को एक चार्ट पेपर दिया, और उनसे अपनी कविताओं को साफ़-सुथरे ढंग से लिखने व सजाने को कहा। इन कविताओं को कक्षा की दीवार पर प्रदर्शित किया गया। उनमें से एक कविता इस प्रकार थी :

Everybody come

Everybody go

Everybody walk

On your tip–toe

जब विद्यार्थियों ने अपने काम को प्रदर्शित होते देखा तो उनके चेहरे पर गर्व और ख़ुशी के जो भाव आए, वह अनमोल थे। और यह जानकर, कि उन्होंने कुछ नया और सार्थक बनाया है, मुझे ख़ुशी और सन्तुष्टि की अनुभूति हुई।

अँग्रेज़ी से नलिनी रावल द्वारा अनुवादित।

उपमा रानी, शिक्षिका, राजकीय प्राथमिक विद्यालय, माजरी ग्रांट 1, डोईवाला, देहरादून, उत्तराखण्ड